दूसरी ढाल

(पद्धरि छन्द)

ऐसे मिथ्यादृग-ज्ञान-चरण-वश, भ्रमत भरत दुख जन्म-मरण।
तातैं इनको तजिये सुजान, सुन, तिन संक्षेप कहूँ बखान।।१।।

जीवादि प्रयोजनभूत तत्त्व, सरधै तिन माहिं विपर्ययत्व।
चेतन को है उपयोग रूप, बिनमूरत चिन्मूरत अनूप।।२।।

पुद्गल-नभ-धर्म-अधर्म-काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल।
ताकों न जान विपरीत मान, करि करै देह में निज पिछान।।३।।

मैं सुखी-दुखी मैं रंक-राव, मेरो धन गृह गोधन प्रभाव।
मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, बेरूप सुभग मूरख प्रवीन।।४।।

तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान।
रागादि प्रकट ये दुःख दैन, तिन ही को सेवत गिनत चैन।।५।।

शुभ-अशुभ बंध के फल मँझार, रति-अरति करै निजपद बिसार।
आतमहित हेतु विराग ज्ञान, ते लखैं आपको कष्टदान।।६।।

रोकी न चाह निज शक्ति खोय, शिवरूप निराकुलता न जोय।
याही प्रतीतिजुत कछुक ज्ञान, सो दुखदायक अज्ञान जान।।७।।

इन जुत विषयनि में जो प्रवृत्त, ताको जानों मिथ्याचरित्त।
यों मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह, अब जे गृहीत सुनिये सु तेह।।८।।

जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव, पोषैं चिर दर्शनमोह एव।
अन्तर रागादिक धरैं जेह, बाहर धन अम्बर तैं सनेह।।९।।

धारैं कुलिंग लहि महत भाव, ते कुगुरु जन्म-जल-उपल नाव।
जे राग-द्वेष मल करि मलीन, वनिता गदादिजुत चिह्न चीन।।१०।।

ते हैं कुदेव तिनकी जु सेव, शठ करत न तिन भव-भ्रमण छेव।
रागादि भावहिंसा समेत, दर्वित त्रस थावर मरण खेत।।११।।

जे क्रिया तिन्हैं जानहु कुधर्म, तिन सरधै जीव लहै अशर्म।
याकूँ गृहीत मिथ्यात्व जान, अब सुन गृहीत जो है कुज्ञान।।१२।।

एकान्तवाद-दूषित समस्त, विषयादिक पोषक अप्रशस्त।
कपिलादि-रचित श्रुत को अभ्यास, सो है कुबोध बहु देन त्रास।।१३।।

जो ख्याति-लाभ पूजादि चाह, धरि करत विविध-विध देह-दाह।
आतम-अनात्म के ज्ञानहीन, जे जे करनी तन करन छीन।।१४।।

ते सब मिथ्याचारित्र त्याग, अब आतम के हित पन्थ लाग।
जगजाल-भ्रमण को देहु त्याग, अब 'दौलत' निज आतम सुपाग।।१५।।